<u>On Sri Prabhakara Sastri Rachanas in Hindi</u>

By V.Appa Rao

From Sethu Magazine of University Grants Commission

1993-1995

तेलुगूपन और संप्रदाय

तेलुगू के प्रख्यात साहित्यकार वेटूरी प्रभाकर शास्त्री की रचना से उद्गत

—वि. अप्पाराव

तेलुगू और आंध्र, ये दोनों समानार्थक शब्द हैं और तेलुगू और आंध्र के लोग भी एक ही हैं। मेरे विचार में तेलुगू और आंध्र संप्रदाय भी एक ही हैं। हमारे पूर्वजों ने कहा है कि "आंध्रश्च द्रविड़ कर्नाट महाराष्ट्रश्च गुर्जराह"- इन पांचों जातियों के लोगों को पंच द्राविड़ कहा जाता है। प्राचीन काल से अब तक इन पांचों जातियों के लोगों का आचार-व्यवहार, आहार-बिहार, कविता गान और कुल मर्यादाओं में तुलनात्मक दृष्टि से एकरुपता है। उत्तर भारत में पंच गौड़ों को "सारस्वताह् कान्यकुब्जाह् गौडाह्" नाम से पुकारा जाता है। ये लोग पंच द्राविड़ों से भिन्न हैं। वर्तमान समय में अधिकतर संबंध आंध्र द्राविड़ और कर्नाटक जाति के लोगों के बीच में हैं। आज से दो हजार वर्ष पूर्व सातवाहन और इक्ष्वाकु वंश के राज्य काल में मराठी और गुजराती लोगों से भी इन तीनों जातियों के लोगों का बहुत निकट का संबंध था। श्री शंकराचार्य रचित पूजा पाठ में नैवेद्य क्रम वर्णन से हम पहचान सकते हैं कि आजकल के आंध्र लोगों का आहार संप्रदाय पंच द्राविड़ों के आहार संप्रदाय से मिलता है। इन शलोकों में रचा है कि शाल्यान्न, घी, दाल, सब्जियां, चटनी, घप्पलम और दही प्रधान आहार पदार्थ हैं। आजकल भी आंध्र में लोगों की यही आहार पद्धति है।

प्राचीन काल में तेलुगू जाति की महिलाएं पल्लू नहीं डालती थीं। मराठी और गुजराती जाति के संपर्क में आने से प्रतिष्ठानपुरा यानी पैठन नाम से राजधानी में पैट (तेलुगू)/पल्लू (हिन्दी) पहनने से नागरिक संप्रदाय बनी है। सातवाहन यानी शालीवाहन "गाथा सप्तशती" और अन्य संस्कृत काव्यों में आंध्र नारी का वर्णन है। मंकुध की "काव्य मीमांसा" में यह श्लोक है

"केशाः सपुष्प गंडूषाह जघने मणिमेखला
हारो रक्तोंशुकं शुभ्रं वेषह् स्यादंध्रयोषिता

सदुक्तिकर्णामृत में-

"वाचो माधुर्यवीर्षण्यो नाभयह शिधिलांशुकाः
दृष्टयश्च चलट्भ्रूका मंण्डनान्याध्रेषिताम् (भरत्रुमेणठस्य)

"अमूलतो वलित कुन्तल चारुचूडः
चूर्णालिकप्रकर लांचितबालभागः
कच्छनिवेशनिबिडीकृतानी विरेष
वेषिष्वंरं जयतु कुन्तलकामिनीनां" (राजशेखरस्य)

वाक् सत्वांगसमुद्भवैं श्रमिनयैर्नित्यं सोल्वालसतो
वामांग्यह् प्रणयन्ति यत्र मदनक्रीड़ा महानाटकं
अत्रांध्रास्तव दक्षिणेन् त इमे गोदावरी स्रोतसां
सप्तानापि वार्निधिप्रणइनां द्वीपान्तरालश्रियः (राजशेखरस्य)

मानसोल्लास में-

"काश्चित्कुन्तलकामिन्यह् कुटिलीकृतकुन्तलाः
काश्चिद्रविडकामिन्यः प्रकाशितपयोधराः
महाराष्ट्रस्त्रीयह् काश्चित्लंखलोलकभूषिताः
आंध्रनार्योविराः काश्चिचद्अपसव्योत्तरीयकाः
गुर्जर्यो वनिताः काश्चिदापाणिकृतकंचुकाः

फूलों से सजा हुआ गजरा, मणिखचित करधनी, रक्तहार, सफेद रंग की साड़ी, ये सब तेलुगू नारी का वेश और रुप है (पहली पद्य का सार)। मतृमेण्ठाति कवियों की रचना से मालूम होता है कि आंध्र नारियां सुन्दर, नृत्यगान में रूचि रखने वाली और भोली होती है।

पहले शताब्दियों में आंध्र संगीत और साहित्य से मराठी और कन्नड़ लोगों के अधिक संबंध थे। मतंग के "बृहद्देशी" रचना में आंध्र देश के संगीत में भिन्न-भिन्न संप्रदायों का विवरण है। तेलुगू लोगों में विवाहों में मंगलसूत्र बांधने की परंपरा चिरकाल से चली आ रही है। यह परंपरा उत्तर भारत में नहीं है। आर्यों को "गृह्य सूत्र" ग्रंथ में भी इसका उल्लेख नहीं है। पुराने जमाने से आंध्र में विवाह के समय ताल वृक्ष के पत्ते को वेस्ठ्न बना के उसके ऊपर हल्दी का लेप देकर उसको वधू के गले में सुतली के साथ तीन गांठों में वर द्वारा बंधवाने की प्रथा अभी तक है। इसी सूत्र को तेलुगू में "ताली बोट्टू" कहते हैं। ऐसे ही एक और प्रथा है गांवों में। यह है ताल वृक्ष के पत्ते को मुंद्री के रूप में कान में पहनना। (ताल+आकू) =तालआकू या ताटाकू तेलुगू में संधि में संयुक्त शब्द बन गया है। इस शब्द ने संस्कृत भाषा में "ताटंक" रूप लिया है। (कान+आकू) =तेलुगू में (चेवी+आकू) =चेवाकू बन गया है ताटाकू और चेवाकू पहनने की प्रथा आंध्र लोगों से दूसरे द्राविड़ों की प्रथा बन गयी है। आंध्र देश में ताल वृक्ष एक महत्वपूर्ण कल्प वृक्ष है।

आंध्र में कई वर्णों के लोग रहते हैं। इनमें वेलनाडू, वेगिनाडू तेलगाण्य आदि ब्राह्मन, रेड्डी, वेलमा, कम्मा, कापू, कोमपठी, राजू (क्षत्रिय) आदि वर्णों के लोगों में उपयुक्त प्रथा प्रचलित हैं।

आंध्र के लोग अतिथि मर्यादा में रूचि रखते हैं। स्वतंत्रता को पसंद करते हैं, अल्पसंतोषी है। दुर्नीति को अपनाते नहीं, निम्न विषयों में कामना नहीं रखते। उनमें माया और मर्म वचन नहीं होते, विध्या में पूर्ण प्राप्ति हासिल करने का प्रयास करते हैं। दोस्ती और मिठास चाहते हैं आंध्र (प्रजा) निरअहंकारी और निरभिमानी एवं सरल स्वभाव के हैं। ये उज्जवल और बलवान लोग हैं।

तेलुगू लोगों का स्वरूप स्वभावों के साथ उनके भाषा और गान रीति भी प्रत्येक लक्षण से प्रस्तावनीय हैं। तेलुगू शब्द उच्चारण द्राविड़ भाषा उच्चारण से सुंदर है। "तेलुगू तेटा" यानी तेलुगू सरलता प्रसिद्ध है। तेलुगू देश का वातावरण बढ़िया होने के कारण तेलुगू लोगों की मुखमुद्रा स्पषट और विकसित हैं। उनके आहार-विहारों में दृढ़ता और गम्भीरता के कारण उनका भाषा उच्चारण स्पष्ट है। तेलुगू में अन्य द्राविड़ भाषाओं से ज्यादा अक्षर हैं। अजंत शब्दों से भासित तेलुगू बोलना आसान है। तेलुगू भाषा पदों में द्रविड़ भाषा की कोमलता और संस्कृत भाषा की क्लिष्टता का मिलन दिखते हैं। इसीलिए तेलुगू कविता मनोरंजक होती है।

तेलुगू कविता संस्कृत अनुगामी है। तेलुगू भाषा में कवित्रय नाम के नन्नया, तिकना और एरूप्रगंडा कवि प्रसद्धि हैं। ये तीनों गोदावरी, कृष्णा और पिनाकिनी नाम की आंध्र देश की नदी त्रय जैसे हैं। इनके बाद श्रीनाथ और पोतना कवि भी प्रसिद्ध हैं। ये पांचों कवि आंध्र देश में ग्यारहवीं शताब्दी से पंद्रहवीं शताब्दी के बीच में कविता का प्रमाण और परंपरा सिद्ध किए हैं। इनकी कविता में दैव भक्ति, नैतिक मूल्य, उत्तम आदर्श, सदाचार और मानवता प्रतिष्ठित हैं। इनके सत्काव्य संप्रदाय आज भी आदर्श के पात्र हैं।

तेलुगू भाषा ने भक्ति, साहित्य और संगीत को अमर बनाया है। अन्नमाचार्य, पोतन्ना, गोपन्ना, क्षेत्रज्ञा और त्यागराज, दक्षिण भारत शास्त्रीय संगीत परंपरा में अन्नामाचार्य प्रपितामह हैं। ये चौदवीं शताब्दी में थे त्यागराज को संगीत नादयोगी कहते हैं। ये अब से डेढ़ सौ साल पहले थे। पोतन्ना ने तेरहवीं शताब्दी में महाभागवत की रचना तेलुगू में की थी। इनको तेलुगू भाषा में हिन्दी के तुलसीदास का तुलनात्मक स्थान दे सकते हैं।

From April 1993Issue

श्री प्रज्ना प्रभाकर

– विस्सा अप्पा राव

मुझे अच्छी तरह याद है कि प्रख्यात तेलगु साहित्यकार मेरे गुरूदेव और नानाजी श्री प्रभाकर शास्त्री जी 1949 में तिरूपति (आंध्र प्रदेश) में रहते थे। वे अपने निवास पर एक दिन प्रार्थना समारोह में योगसाधकों को अपनी आत्मा-कथा 'प्रज्ना प्रभाकरम्' सुना रहे थे। वे मास्टर सी0वी0जी0 के योग साधना प्रक्रिया के सहारे अपने अंदर की प्रज्ना की समझ कर, इस योग के बारे में सर्वजनों को बताने के लिए अपनी आत्मकथा की रचना कर रहे थे।

बचपन से ही श्री शास्त्री जी निरंतर भगवत चिंतन के साथ-साथ औरों के सुख और भलाई के चिंतन में व्यस्त रहते थे। जब वे बीमारी से पीड़ित थे, तब श्री मास्टर सी0वी0वी0 ने उन्हें अपने योग द्वारा स्वस्थता प्रदान करके उन्हें योगी मित्र बनाया। मानव शरीर में बसने वाली आत्मा भगवान की दिव्यता का प्रतिविम्ब है। उस आत्म-शक्ति को जगा के वे मानव शरीर को शाश्वत बनाने के लिए श्री मास्टर सी0वी0वी0 अपने भृक्त रहित तारक राजयोग में प्रयास किया था। श्री सी0वी0वी0 तमिलनाडू प्रदेश में कुंभकोण नाम के नगर में रहते थे। उनका पूरा नाम श्री कुचुपाटी वेंकास्वामी राव था। उनकी योग साधना मई 1910 से प्रारंभ होकर 1922 मई मक चली थी। उन दिनों में उन्होंने दक्षिण भारत में हजारों शिष्यों को दीक्षा देकर योग से आगे बढ़ने का सहारा दिया। 1922 में वे अपने पार्थिव शरीर को छोड़ने के बाद भी अपने सूक्षम शरीर में रहते हुए अपने मित्रों को आज भी आगे बढ़ने का मार्ग दिखा रहे हैं। जैसे स्विच चलाते ही रेडियो टी.वी. रिसीवर बोलने लगते हैं वैसे ही श्री मास्टर सी0वी0वी0 आज भी अपने योग साधकों शिष्यों को दर्शन दे रहे हैं।

श्री मास्टर सी0वी0वी0 अनेक जन्मों में तपस्या के माध्यम से प्राप्त किए ज्ञान को आज अपने साधकों को अपना नाम एक बार जपते ही आनंद प्रदान कर रहे हैं। जैसे श्री बालाजी सब भक्त जनों की सच्ची मनोकामनाएं पूरी करते हैं, वैसे ही श्री मास्टर साधकों की कामनाएं पूरी कर रहे हैं। श्री मास्टर ने कहा था कि जो साधक योग प्रत्येक दिन प्रातः एंव सायं नियमित रूप से दस वर्ष तक उनके नाम का स्मरण करके लगातार उनका सुमिरन-ध्यान करेगा उसका शुभ फल साधक के साथ-साथ उसके परिवारजनों और मित्रों को भी मिलेगा।

श्री मास्टर योग साधकों के शरीर को स्वस्थ बनाने के साथ-साथ औरों की कठिनाइयों और शारीरिक अस्वस्थता को दूर करने के लिए प्रार्थना करते हैं। ऐसे प्रयास में श्री शास्त्री जी को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है और उन्हें योग में उत्तम स्थान मिला है। श्री शास्त्री जी जीमूतवाहन के भ्रांति करूणा स्वरूप हैं।

श्री रामचंद्र, गौतम बुद्ध और महात्मा गांधी, श्री शास्त्री जी के आर्दश पुरूष हैं। सत्य साधन, परमात्मा का चिंतन, अहिंसा, जीव पर दया करना श्री शास्त्री जी का परम धर्म है। उन्होंने योग साधना में अपना जीवन यापन करके योग का फल दक्षिण भारत में अनेक लोगों को प्रदान किया। उन्होंने आने वाली पीढ़ियों के मार्गदर्शन के लिए अपनी आत्म कथा 'प्रज्ना प्रभाकर' में दी है। प्रज्ना प्रभाकर महात्मा गांधी की आत्म कथा "My Experiments with Truth" के तुलना में उत्तम रचना है। श्री शास्त्री जी के उपदेशों पर चल कर हर एक व्यक्ति श्री मास्टर योग साधना में अपने अतःकरण में परमात्मा का साक्षात्कार करके जीवन मुक्त हो सकता है।

आइए, हम सब ईश्वर से प्रार्थना करते हैं। हमारे मन मंदिर में ज्ञान ज्योति जलनी चाहिए। अज्ञान और अहंकार समाप्त होना चाहिए और हम सब में परिवर्तन आना चाहिए। इस देश में और संसार में सर्वत्र सत्य, अहिंसा और समता को व्यवहार में लाया जाना चाहिए। जीवन, मानव ओर परमात्मा की एकता को पहचानेंगे। श्री प्रभाकर स्वर्ण कांति की वर्षा करके हमारे हृदय में परमात्मा की ज्योति जलाएंगे।

❐

From October 1994 Issue

सजीव रचना किसे कहते हैं?

(प्रख्यात तेलुगु लेखक श्री वेटूरी प्रभाकर शास्त्री की १६४८ के रचना का अनुवाद अनुवादक विस्सा अप्पाराव
प्रकाशन अधिकारी

प्रसिद्ध रचनाऐं प्रतिभाशाली एवं प्रबुद्ध सहृदय लोगों द्वारा की जाती हैं।

जब दूध को उबाला जाता है तब उसके ऊपर स्निग्ध और मधुर मलाई जम जाती है–बस ऐसे ही होते हैं–रचनाकार जिन्हें जनता की क्रीम कहा जा सकता हैं

जब मलाई को और गरम किया जाता है तब उसका नरम स्वभाव गायब होकर उससे घी निकलता है– बस ऐसी ही होती है प्रसिद्ध रचना।

हम सजीव रचना की तुलना एक सत्पुरूष से कर सकते हैं जो अपने अड़ौस–पड़ौस लोगों की भलाई करता है, उनको नेक सलाह देता है और आनन्द प्रदान करता है।

कुछ सजीव रचनाएं ऐसी होती हैं जो किसी अमुक काल और देश की आवश्यकताओं और मांगों को पूरी करती हैं और कालांतर में पुरानी लगने लगती हैं।

कुछ सजीव रचनाएं ऐसी होती हैं जो बाह्य रूप से सुंदर लगती हैं किंतु उनका वास्तविक प्रभाव अच्छा नहीं होता। उनके गुण दोषों में जनसाधारण की समकालिक भावनाएं प्रतिबिम्बित होती हैं। सजीव रचनाओं को समाज का दर्पण कहा जाता है।

कुछ रचानाएं शाश्वत होती हैं जिनकी उपमा ध्रुवतारा से दी जा सकती है। ऐसी रचनाएं सहृदय व्यक्तियों के मानस पटल पर स्थायी एवं अमिट छाप छोड़ती है।

जो लोग मानव जीवन को परमार्थ समझते हैं और उसके प्रति शाश्वत दृष्टिकोण रखते हैं वही लोग ऐसे शाश्वत रचनाएं कर सकते हैं। मेरे विचार में ऐसे महान रचनाकार और युगचेता गिनती में बहुत कम मिलेंगे। वाल्मीकि, व्यास और कालिदास की रचनाओं में भी कुछ अंश ऐसा है जिसे शाश्वत कहा जा सकता है। उनकी अधिकांश रचनाओं में समाज की तात्कालिक परिस्थितियों का चित्रण किया गया है। मेरे विचार से शाश्वत रचनाएं गांधी युग में की जाएंगी।

गांधी युग में ही मानवता की संपूर्ण एकता, समभाव और सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है। जो देश और काल के अनुकूल है।

गांधी साहित्य में सम्पूर्ण मानव समाज को रोटी, कपड़ा की समस्या से लेकर परमार्थ तक इच्छाओं और क्रियाओं का समन्वय उपलब्ध है। कुछ रचनाकार ऐसे होते है जो चार छह किताबें पढ़कर भाषा सीख लेते हैं और रचना करने लगते हैं तथा यह दावा करते हैं कि मेरी रचना लोकोपकारिक है लेकिन ऐसी रचना को श्रेष्ठ रचना नहीं कहा जा सकता।

मानवता के सम्पूर्ण विकसित रूप को श्रेष्ठ मानवता कहा जा सकता है। जब श्रेष्ठ मानवता के लिए सार्वभौमिक संवेदना उत्पन्न होती है तब उत्तम रचना का सृजन होता है।

गांधी के निधन की खबर सुनते ही जनता में संवेदना का सागर उमड़ पड़ा था, उसी सागर की लहरों से जो रचनाएं की गई वही भावी रचनाओं का आधार बनेंगी।

गांधी–सूक्त ही उनके मूलाधार होंगे। मेरे विचार में भविष्य में काव्य की विषयवस्तु सर्वसंवेदनशील होगी। रचनाओं के प्रभाव में युग का प्रभाव परिलक्षित होगा।

गांधी के निधन की खबर सुनते ही सारे संसार में जो प्रतिक्रियाएं हुई यदि हम उनका वास्तविक चित्रण करें तो वे हजार उपन्यास के बराबर होगा। उन पर अगणित कविताएं रची जा सकती हैं।

जैसे जैसे रचनाकार सत्य के सौन्दर्य पहचानने लगेंगे वैसे वैसे वे लोग काल्पनिक रचनाएं करना छोड़ देंगे।

गांधी के साथ अपने जीवन को उत्सर्ग करने वाले आत्मधीरों की वीर गाथाएं ही कविता की विषयवस्तु बनेगी।

खून–खराबा, ईर्ष्या, राजतंत्र, जात–पात आदि के भेदों से युक्त रचनाएं करना छोड़ देना चाहिए। आत्म–गुण, प्राणि मात्र पर दया आदि से सम्पन्न विषय–वस्तु को रचनाओं का आधार बनाया जानाा चाहिए।

रचना की विषय वस्तु भाषा ठीक होते हुए भी यदि लेखक का हृदय परमात्मा की ओर आकर्षित नहीं है तो वह रचना निर्जीव मानी जाएगी। परमात्मा के अनुरागी लेखक के सामने हरएक विषय वस्तु और भाषा ज्योति में बदल जाती है। ईश्वर प्रेमी लेखक की रचना सदैव सौन्दर्यमयी होती है।

From January 1995 Issue